

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 2 अध्याय 4: राजा का सृष्टि सम्बन्धी प्रश्न

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



राजा परीक्षित का मन अन्ततः श्रीकृष्ण के चरणों पर स्थिर हो गया है, और राज्य, परिजन तथा शरीर — सभी आसक्तियाँ चुपचाप विलीन हो रही हैं, जबकि बाह्य कथा-वाचक यह पूछने की तैयारी करते हैं कि आगे क्या हुआ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। तृतीय अध्याय एक अनुत्तरित अनुरोध पर समाप्त हुआ था: नैमिषारण्य के वन-आश्रम में, ऋषि शौनक ने अभी-अभी सूत गोस्वामी से यह प्रकट करने का अनुरोध किया था कि राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेव गोस्वामी से आगे क्या पूछा। यह चतुर्थ अध्याय उस अनुरोध का उत्तर देता है — किन्तु उससे पहले, यह संक्षेप में और मार्मिक ढंग से यह दर्शाता है कि श्रीशुकदेव के उपदेश ने मरणासन्न राजा के हृदय पर पहले ही क्या प्रभाव डाला था। सूतजी वर्णन करते हैं कि श्रीशुकदेव के वचन सुनकर परीक्षित ने अपनी समस्त आसक्तियाँ — शरीर, परिवार, राज्य — त्याग दीं और अपना मन पूर्णतः श्रीकृष्ण पर केन्द्रित कर लिया। तत्पश्चात् ही राजा अपना प्रश्न पूछते हैं: भगवान् इस विशाल ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन तथा संहार किस प्रकार करते हैं? और जब श्रीशुकदेव का उत्तर आरम्भ होता है, तो वह ब्रह्माण्ड-विज्ञान की किसी व्याख्या से नहीं, अपितु भागवत में कहीं भी पाई जाने वाली सर्वाधिक सुन्दर एवं व्यापक स्तुतियों में से एक से आरम्भ होता है — परम पुरुष को नमस्कार करने वाला एक भजन, जिसे इस सम्पूर्ण अध्याय में समर्पित किया गया है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 2 (द्वितीय स्कन्ध)
- अध्याय: 4 (चतुर्थ अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक (गीता प्रेस): परीक्षित सृष्टि की रचना के विषय में अपना प्रश्न श्रीशुकदेव के समक्ष रखते हैं, और श्रीशुकदेव अपना उत्तर आरम्भ करते हैं
- मुख्य वक्ता: सूत गोस्वामी, जो सम्पूर्ण अध्याय में ऋषि शौनक तथा नैमिषारण्य के ऋषि-समुदाय से कथा कहते हैं; उनकी कथा के भीतर, राजा परीक्षित (श्लोक 5–10) तथा श्रीसुक/श्रीशुकदेव गोस्वामी (श्लोक 12–25) बोलते हैं
- मुख्य श्रोता: नैमिषारण्य में ऋषि शौनक तथा समस्त ऋषि-समुदाय (बाह्य कथा-संरचना); कथित कथा के भीतर, श्रीशुकदेव गोस्वामी परीक्षित का प्रश्न सुनते हैं, और परीक्षित श्रीशुकदेव की आरम्भिक स्तुति सुनते हैं
- मुख्य स्थान: नैमिषारण्य का वन-आश्रम, जहाँ सूतजी कथा कह रहे हैं; तथा, उस कथा के भीतर, गंगा-तट, जहाँ मरणासन्न परीक्षित पहले श्रीशुकदेव गोस्वामी के समक्ष बैठे थे
- मुख्य विषय-वस्तु: श्रीशुकदेव के उपदेश को सुनकर परीक्षित का सम्पूर्ण आन्तरिक वैराग्य; भगवान् की मायाशक्ति द्वारा जगत् के उद्भव, स्थिति तथा प्रलय की विधि पर उनका प्रश्न; तथा श्रीशुकदेव का आरम्भिक उत्तर — परम पुरुष को, समस्त तीन ब्रह्माण्डीय कार्यों के स्रोत के रूप में, समर्पित एक विस्तृत स्तुति
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 2, अध्याय 4, श्लोक 1–25
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

वह राजा जिसका हृदय पहले ही मुक्त हो चुका था

अध्याय शान्त ढंग से आरम्भ होता है, लगभग एक प्रसंगवश टिप्पणी के रूप में, किन्तु उसमें वास्तविक गुरुत्व है। सूतजी नैमिषारण्य के ऋषियों को बताते हैं कि श्रीशुकदेव के वचन सुनकर — अर्थात् अब तक कहे गए सम्पूर्ण तीन अध्यायों को सुनकर — राजा परीक्षित का मन विशेष रूप से श्रीकृष्ण के चरणों में समर्पित हो गया। सूतजी कहते हैं कि एक ही क्षण में राजा ने वह गहरी आसक्ति त्याग दी जिसे उन्होंने जीवन-भर सँजोया था: अपने ही शरीर के प्रति, अपनी पत्नी, पुत्रों, निवास, पशुओं, धन तथा कुटुम्बियों के प्रति, और यहाँ तक कि अपने उस राज्य के प्रति भी जो तब तक किसी संकट को नहीं जानता था। यह रुककर विचार करने योग्य है। परीक्षित पेशे से कोई संन्यासी नहीं थे; वे एक शासनरत सम्राट् थे, पाण्डवों के वंशज, ऐसे व्यक्ति जिनका राज्य शान्त और समृद्ध था। फिर भी एक उपदेश के भीतर ही, पहचान और स्वामित्व की वह सम्पूर्ण संरचना सहज ही ढीली पड़ गई।

अपनी मृत्यु निकट जानकर, उदार-हृदय राजा ने मानव-जीवन के प्रथम तीन लक्ष्यों — धर्म, अर्थ तथा काम — से अपना सम्बन्ध त्याग दिया, जो अधिकांश मानव-प्रयासों को दिशा देते हैं। उन्होंने भगवान् वासुदेव के साथ अपनी सम्पूर्ण तादात्म्यता स्थापित कर ली। और इसी अवस्था में — अब न तो अपने राज्य की रक्षा करने वाला व्यक्ति, न ही अपने वंश को सुरक्षित करने वाला, अपितु एक ऐसी आत्मा जो पूर्णतः भगवान् की ओर उन्मुख है, श्रीकृष्ण की महिमा को और अधिक सुनने के लिए गहन श्रद्धा से भरी हुई — परीक्षित ने श्रीशुकदेव से वही प्रश्न पूछा जो शौनक अब सूतजी से पूछ रहे हैं। कथा-संरचना यहाँ सुन्दर ढंग से मुड़ती है: जो प्रश्न अभी उद्धृत किया जाने वाला है वह इस अध्याय के लिए नया आविष्कृत प्रश्न नहीं, अपितु वही प्रश्न है जो राजा ने कभी गंगा-तट पर पूछा था, अब सम्पूर्ण भागवत की द्वितीय कथा में पुनः सुनाया जा रहा है।



राजा परीक्षित की राज्य, परिजन तथा शरीर पर पकड़ एक साथ ढीली पड़ जाती है, जैसे-जैसे उनका मन श्रीशुकदेव के उपदेश के पश्चात् पूर्णतः श्रीकृष्ण के चरणों की ओर मुड़ता है (श्लोक 1-4)।

राजा का प्रश्न: ब्रह्माण्ड की रचना कैसे हुई?

परीक्षित वास्तव में क्या पूछते हैं यह छह श्लोकों में विस्तृत किया गया है, और मृत्यु के कगार पर खड़े व्यक्ति के लिए यह प्रश्नों का एक उल्लेखनीय रूप से सटीक, लगभग वैज्ञानिक समुच्चय है। वे एक स्वीकृति से आरम्भ करते हैं: श्रीशुकदेव के वचन उनके अज्ञान के अन्धकार को दूर कर रहे हैं, और वे ऋषि पर पूर्ण विश्वास करते हैं, क्योंकि श्रीशुकदेव सर्वज्ञ तथा पापरहित हैं। तत्पश्चात् प्रश्न स्वयं आते हैं। पहला: भगवान्

अपनी ही माया के द्वारा — अपनी मोहक, सृजनात्मक शक्ति के द्वारा — इस ब्रह्माण्ड को अस्तित्व में कैसे लाते हैं, ऐसा रहस्य जो इतना गहन है कि स्वयं ब्रह्मा जैसे महान् देवता भी उसे समझने में कठिनाई पाते हैं? दूसरा: वही सर्वव्यापी भगवान् अपनी सृष्टि की रक्षा तथा पालन कैसे करते हैं, और समय आने पर उसे पुनः कैसे नष्ट करते हैं? तीसरा, और सबसे उल्लेखनीय: असंख्य शक्तियों के स्वामी होते हुए, वह परम पुरुष अपनी ही आत्मा के साथ क्रीड़ा करते हुए, स्वयं को इतने सारे खिलौनों में — अर्थात् इतने सारे ब्रह्माण्डों में — परिवर्तित करते समय और फिर उन्हें पुनः विलीन करते समय, उनमें से किस शक्ति को अपनाते हैं? परीक्षित स्वीकार करते हैं कि विवेकियों के लिए भी श्रीहरि के अद्भुत कार्यों को समझ पाना कठिन प्रतीत होता है।

इस क्रम में एक चौथा प्रश्न भी छिपा हुआ है, जिसे चूक जाना सरल है किन्तु जो दार्शनिक दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है: वह भगवान्, जो अद्वितीय हैं, सृष्टि तथा उससे सम्बन्धित कार्यों को सम्पन्न करने के लिए प्रकृति के तीनों गुणों को एक साथ किस प्रकार धारण करते हैं; अथवा, वैकल्पिक रूप से, वे ब्रह्मा जैसे विभिन्न रूपों में क्रमशः प्रकट होकर उन्हीं उद्देश्यों को कैसे पूर्ण करते हैं? क्या यह एक साथ किया गया एक ही कार्य है, अथवा एक के बाद एक सम्पन्न होने वाली परिवर्तनों की श्रृंखला? श्रीशुकदेव के समक्ष यह सब रखने के पश्चात्, राजा एक सरल, आदरपूर्ण अनुरोध के साथ समाप्त करते हैं: चूँकि आप वेदों में पारंगत हैं और स्वयं परमात्मा को साक्षात्कार कर चुके हैं, कृपया इसका उत्तर दें।



राजा परीक्षित, जिनका अज्ञान श्रीशुकदेव के उपदेश से पहले ही छटने लगा है, यह पूछते हैं कि भगवान् अपनी माया से इस विशाल ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन तथा संहार किस प्रकार करते हैं (श्लोक 5-10)।

श्रीशुकदेव अपना मन स्थिर करते हैं और आरम्भ करते हैं

केवल एक श्लोक — एकादश श्लोक — सम्पूर्ण अध्याय की धुरी है। सूतजी सभा को बताते हैं कि इस प्रकार राजा द्वारा श्रीहरि की महिमाओं पर प्रवचन देने के लिए अनुरोध किए जाने पर, श्रीशुकदेव ने भगवान् श्रीकृष्ण — समस्त इन्द्रियों के प्रेरक — पर अपना ध्यान केन्द्रित किया और अपना उत्तर आरम्भ किया। यह एक छोटी, लगभग औपचारिक-सी पंक्ति है, फिर भी यह इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि ऐसी शिक्षा किस प्रकार दी जानी चाहिए: माँग पर सुनाए गए स्मृति-आधारित सिद्धान्त से नहीं, अपितु पहले स्वयं भगवान् पर केन्द्रित और स्थिर किए गए मन से। इस आन्तरिक मुड़ाव के पश्चात् ही श्रीशुकदेव बोलते हैं — और जो वे पहले कहते हैं वह वास्तव में परीक्षित के माया, गुणों अथवा सृष्टि की क्रियाविधि सम्बन्धी किसी विशिष्ट प्रश्न का उत्तर नहीं है। वह एक स्तुति है।



राजा के किसी भी प्रश्न का उत्तर देने से पहले, श्रीशुकदेव गोस्वामी पहले अपना ध्यान श्रीकृष्ण पर केन्द्रित करते हैं, बोलना आरम्भ करने से पूर्व अपने मन को एकत्रित करते हैं (श्लोक 11)।

व्याख्या से पहले एक स्तुति

परीक्षित के प्रति श्रीशुकदेव के आरम्भिक वचन नमस्कार की एक विस्तृत स्तुति बनाते हैं — त्रयोदश श्लोकों तक फैली हुई, द्वादश से चतुर्विंश श्लोक तक — इससे पहले कि सृष्टि का वास्तविक विवरण भी आरम्भ हो (वह विवरण आगामी अध्यायों में है)। यह स्वयं एक शिक्षा है: ब्रह्माण्ड की व्याख्या करने से पहले, उसके स्रोत को नमन किया जाता है। स्तुति का पहला ही श्लोक उसका स्वर निर्धारित कर देता है: गम्भीर, दार्शनिक, तथा भगवान् की गहनतम पहचान की ओर उन्मुख — न कि किसी विशेष लीला अथवा रूप की ओर।

श्री शुक उवाच

नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे

सदुद्भवस्थाननिरोधलीलया ।

गृहीतशक्तित्रितयाय देहिना-

मन्तर्भवायानुपलक्ष्यवर्त्मने ॥ १२ ॥

śrī-śuka uvāca namaḥ parasmai puruṣāya bhūyase sad-udbhava-sthāna-nirodha-līlayā grhīta-śakti-tritayāya dehinām antarbhavāyānupalakṣya-vartmane

अर्थ: श्रीशुक ने कहा: उस अनन्त महिमावान् परम पुरुष को नमस्कार है, जिन्होंने ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन तथा संहार की अपनी सरस लीला सम्पन्न करने हेतु सत्त्व, रज तथा तम के रूप में तीन शक्तियाँ (विष्णु, ब्रह्मा तथा शिव के रूप में) धारण की हैं; जो समस्त प्राणियों के अन्तर्यामी हैं; और जिनके वास्तविक स्वरूप तथा मार्गों को बुद्धि से नहीं समझा जा सकता। (स्कन्ध 2, अध्याय 4, श्लोक 12)

वहाँ से स्तुति श्लोक-दर-श्लोक विस्तृत होती है, ऐसी दृष्टि में जो जीवन के लगभग किसी भी पक्ष को अछूता नहीं छोड़ती। वे ही हैं जो सज्जनों के दुःख-कष्ट को समूल नष्ट करते हैं और साथ ही दुष्टों की भौतिक वृद्धि को रोककर, समय आने पर उन्हें भी मुक्ति प्रदान करते हैं — और वे यह बिना किसी पक्षपात के करते हैं, क्योंकि समस्त प्राणी, सज्जन हों या अन्यथा, उन्हीं के प्राकट्य हैं। उन्हें ऐसे स्तुत किया गया है जिन्हें भक्त प्राप्त कर सकते हैं किन्तु भक्तिहीन नहीं, और जो ब्रह्म नामक अपने ही स्वरूप में सदा आनन्दित रहते हैं। उनकी स्तुति गाना, उनका स्मरण करना, उनके स्वरूप को देखना, उन्हें अभिवादन करना, अथवा उनकी महिमा सुनना — स्तुति कहती है — मनुष्य को तत्क्षण समस्त अशुद्धियों से मुक्त कर देता है, और उनके चरणों की शरण लेने से बुद्धिमान् जन इस लोक तथा परलोक दोनों की आसक्ति को सहज ही त्याग देते हैं।

भगवान् जो प्रत्येक प्रकार के व्यक्ति को शुद्ध करते हैं

स्तुति का एक अंश इसलिए विशेष रूप से उभरकर आता है कि वह कितनी दूर तक पहुँचता है। तपस्वी, दानशील, उच्च कीर्तिवाले, मन तथा इन्द्रियों को वश में करने वाले, वैदिक मन्त्रों के ज्ञाता, तथा धर्मपरायण — इनमें से कोई भी, स्तुति के अनुसार, भगवान् के चरणों में समर्पण किए बिना सच्ची कल्याण-प्राप्ति नहीं करता। और फिर, एक ही अद्भुत श्लोक में, श्रीशुकदेव उन जनजातियों का नाम लेते हैं जिन्हें उस काल की सामाजिक कल्पना में प्रायः रूढ़िवादी आचरण से बाहर माना जाता था, और घोषणा करते हैं कि वे भी, तथा पापाचार में लिप्त कोई भी अन्य व्यक्ति, केवल उन लोगों की शरण लेकर शुद्ध हो जाते हैं जो स्वयं भगवान् पर निर्भर हैं।

किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुल्कशा

आभीरशुम्भा यवनाः खसादयः ।

येऽन्ये च पापा यदपाश्रयाश्रयाः

शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥ १८ ॥

kirāta-hūṇāndhra-pulinda-pulkaśā ābhīra-śumbhā yavanāḥ khasādayaḥ ye 'nye ca pāpā yad-apāśrayāśrayāḥ śudhyanti tasmai prabhaviṣṇave namaḥ

अर्थ: किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुलकस, आभीर, कंक, यवन, खस तथा पापाचार में लिप्त अन्य कोई भी जन — वे सभी, स्वयं भगवान् पर निर्भर रहने वालों की शरण लेकर शुद्ध हो जाते हैं। उस सर्वशक्तिमान् भगवान् को नमस्कार है। (स्कन्ध 2, अध्याय 4, श्लोक 18)

भागवत की दिव्य कृपा की यह दृष्टि, जो परीक्षित के प्रति श्रीशुकदेव के उत्तर के ठीक प्रथम वचनों में उच्चारित की गई है, यह मानने से इनकार करती है कि कौन निकट आ सकता है इसकी कोई सीमा-रेखा हो।



वही एक परम पुरुष तीन शक्तियाँ धारण करते हैं — विष्णु, ब्रह्मा तथा शिव के रूप में प्रकट होकर, सत्त्व, रज तथा तम के माध्यम से कार्य करते हुए — ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन तथा संहार को एक पावन लीला के रूप में सम्पन्न करने हेतु (श्लोक 12)।

वेदों का प्राकट्य, और शिक्षा की परम्परा

स्तुति के अन्तिम श्लोक कुछ अत्यन्त कोमल की ओर मुड़ते हैं। श्रीशुकदेव भगवान् की स्तुति ज्ञानियों द्वारा साक्षात्कृत आत्मा के रूप में, कर्मकाण्डियों के लिए स्वयं वेद के रूप में, धर्मपरायणों के लिए साक्षात् धर्म के रूप में, तथा तपस्वियों के लिए कठोर तप के रूप में करते हैं — ऐसी वास्तविकता जिसे स्वयं ब्रह्मा तथा शिव भी विस्मय से देखते हैं। उन्हें श्री (समृद्धि तथा सौन्दर्य की देवी) के स्वामी, यज्ञ के स्वामी, समस्त सृष्ट प्राणियों के स्वामी, बुद्धि के स्वामी, तथा पृथ्वी के स्वामी के रूप में स्तुत किया गया है; अन्धक, वृष्णि तथा सात्वत वंशों के रक्षक; तथा वह जिन्हें ज्ञानी गहन ध्यान के माध्यम से मुकुन्द — मुक्तिदाता — के रूप में साक्षात्कार करते हैं। तत्पश्चात् एक विशेष रूप से मनोहर बिम्ब आता है: सृष्टि के प्रारम्भ में, भगवान् द्वारा प्रेरित होकर ब्रह्मा के हृदय में विगत कल्प की स्मृति को पुनर्जीवित करने के लिए, देवी सरस्वती ब्रह्मा के ही मुख से प्रकट हुई — वेद स्वयं, अपने समस्त अंगों (शिक्षा अर्थात् उच्चारण-शास्त्र, व्याकरण आदि) सहित। श्रीशुकदेव प्रार्थना करते हैं कि वही भगवान्, समस्त ज्ञान-प्रसारकों में अग्रणी, बोलना आरम्भ करते समय उन पर कृपालु हों।

स्तुति दो अन्तिम स्पर्शों के साथ समाप्त होती है। पहला, इस वर्णन के साथ कि भगवान्, पाँच स्थूल तत्त्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश) से इन शरीरों की रचना करके, उनमें पुरुष — व्यष्टि आत्मा — के रूप में निवास करते हैं और सोलह साधनों (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण-वायु तथा मन) से युक्त होकर उनके सोलह विषयों का भोग करते हैं। श्रीशुकदेव प्रार्थना करते हैं कि वही भगवान् उनकी वाणी को माधुर्य प्रदान करें। और तत्पश्चात्, उल्लेखनीय रूप से, श्रीशुकदेव स्वयं सर्वज्ञ भगवान् वेदव्यास को — जो अपने ही पिता हैं, और, ग्रन्थ के अनुसार, स्वयं भगवान् वासुदेव से अभिन्न — प्रणाम करते हैं, जिनके कमल-सदृश ओष्ठों से भक्त ज्ञान का अमृत पान करते हैं। अध्याय के अन्तिम श्लोक में, श्रीशुकदेव प्रकट करते हैं कि जो शिक्षा वे देने वाले हैं वह वास्तव में कहाँ से आती है: यह वही शिक्षा है जो स्वयंभू ब्रह्मा ने, ऋषि नारद द्वारा पूछे जाने पर, दी थी — ऐसी शिक्षा जो ब्रह्मा ने स्वयं साक्षात् श्रीहरि से प्राप्त की थी। इस एक ही पंक्ति में, शिक्षा की एक छिपी हुई परम्परा प्रकट होती है, जो भगवान् से आरम्भ होकर, ब्रह्मा से, नारद से होते हुए, अन्ततः मरणासन्न राजा के समक्ष बैठे श्रीशुकदेव के अपने ओष्ठों तक पहुँचती है।



सृष्टि के प्रारम्भ में, भगवान् द्वारा प्रेरित होकर, देवी सरस्वती ब्रह्मा के मुख से वेद के रूप में — अपने समस्त अंगों सहित — प्रकट होती हैं, वही ज्ञान जिसे श्रीशुकदेव अब आगे बढ़ाने वाले हैं (श्लोक 22)।

अध्याय का अन्तिम वचन — और आगे क्या है

अध्याय ठीक वहीं समाप्त होता है जहाँ उसे समाप्त होना चाहिए: उस कोलोफन के साथ जो “महान् एवं गौरवशाली भागवत-पुराण, जिसे परमहंस-संहिता भी कहा जाता है, के द्वितीय स्कन्ध के चतुर्थ अध्याय” की समाप्ति को अंकित करता है। अभी तक कोई भी ब्रह्माण्ड-विज्ञान वर्णित नहीं किया गया है। जो कुछ हुआ है, वह है तैयारी — परीक्षित का हृदय पूर्णतः समर्पित दिखाया गया है, उनका प्रश्न सटीक तथा खोजपूर्ण शब्दों में पूछा गया है, और श्रीशुकदेव ने उस सत्ता के समक्ष नमन किया है जिनके कार्यों का वे वर्णन करने वाले हैं। सृष्टि का वास्तविक प्रकटीकरण — ब्रह्माण्ड भगवान् से किस प्रकार उत्पन्न होता है और उसकी संरचना क्या है — पञ्चम अध्याय, “ब्रह्माण्ड का वर्णन,” से सम्बन्धित है, जो, उपयुक्त रूप से, एक अन्य प्रश्न-प्रसंग से आरम्भ होता है: ऋषि नारद ब्रह्मा से वही प्रकार का प्रश्न पूछते हैं जो परीक्षित ने अभी-अभी श्रीशुकदेव से पूछा है।

इस अध्याय की मुख्य शिक्षाएँ

1. सच्चाई से सुनी गई शिक्षा श्रोता को पूर्णतः बदल देती है। श्रीशुकदेव के वचन सुनकर, परीक्षित ने केवल सूचना ही प्राप्त नहीं की — उन्होंने एक ही क्षण में शरीर, परिवार, धन तथा राज्य की समस्त आसक्ति त्याग दी, अपना मन पूर्णतः श्रीकृष्ण की ओर मोड़ लिया (श्लोक 1-4)।
2. एक मरणासन्न राजा की अन्तिम चिन्ता ब्रह्माण्ड-विज्ञान थी, न कि आत्म-सान्त्वना। अपने लिए सान्त्वना खोजने के बजाय, परीक्षित ने पूछा कि भगवान् अपनी माया से ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन तथा संहार कैसे करते हैं — यह समझ का प्रश्न था, न कि व्यक्तिगत भय का (श्लोक 5-10)।
3. सही शिक्षा एक एकत्रित, समर्पित मन से आरम्भ होती है। राजा के किसी भी प्रश्न का उत्तर देने से पहले, श्रीशुकदेव पहले अपना ध्यान श्रीकृष्ण पर केन्द्रित करते हैं — यह दर्शाता है कि पावन ज्ञान किस प्रकार दिया जाना चाहिए (श्लोक 11)।

4. सृष्टि की कथा शुरू होने से पहले उसके स्रोत के प्रति नमन प्राथमिकता पाता है। श्रीशुकदेव का सम्पूर्ण आरम्भिक उत्तर एक स्तुति है, न कि ब्रह्माण्ड-विज्ञान का व्याख्यान — उपासना व्याख्या से पहले आती है (श्लोक 12-24)।

5. भगवान् की कृपा योग्यता अथवा जन्म की कोई सीमा नहीं मानती। तपस्वी, विद्वान् तथा धर्मपरायण केवल भगवान् के चरणों में समर्पण के द्वारा ही कल्याण प्राप्त करते हैं — और, स्तुति के अनुसार, वे जातियाँ भी जिन्हें रुढ़िवादी आचरण से बाहर माना जाता है, उन लोगों की शरण से शुद्ध होती हैं जो भगवान् पर निर्भर हैं (श्लोक 17-18)।

6. समस्त ज्ञान, वेदों सहित, भगवान् से ही उत्पन्न होता है। सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्मा के मुख से सरस्वती का प्राकट्य, तथा हरि से ब्रह्मा से नारद से श्रीशुकदेव तक शिक्षा की परम्परा, यह दर्शाती है कि पावन ज्ञान भी स्वयं उसी एक स्रोत से प्रवाहित होने वाला एक उपहार है (श्लोक 22-25)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय द्वारा अनुसरण किए गए क्रम में कुछ शान्तिपूर्वक शिक्षाप्रद है। एक राजा, जिसे अभी-अभी ध्यान तथा मुक्ति के गहनतम रहस्य बताए गए हैं, यह उत्तर नहीं देता कि वह और अधिक रहस्य सीखना चाहता है — वह अपनी पकड़ हर उस वस्तु से ढीली कर देता है जिसे उसने कभी अपना कहा था। और एक ऋषि, जो सबसे विशाल कल्पनीय विषय — ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, पालन तथा विलय — की व्याख्या करने वाला है, किसी चित्र अथवा सिद्धान्त से आरम्भ नहीं करता। वह नमन से आरम्भ करता है। दो अत्यन्त भिन्न व्यक्तित्व, एक मरणासन्न सम्राट् तथा एक सिद्ध ऋषि, यहाँ एक ही मुद्रा में पहुँचते हैं: ध्यान एकत्रित, हाथ जुड़े हुए, हृदय भगवान् की ओर मुड़ा हुआ, इससे पहले कि दोनों में से कोई भी आगे बोले अथवा कार्य करे। सम्भवतः यही इस अध्याय की वास्तविक शिक्षा है, जो सीधे कहने के बजाय इसकी संरचना में ही चुपचाप गुँथी हुई है — कि हम जो कुछ भी ग्रहण करने वाले हैं, चाहे वह जीवन-भर के प्रश्न का उत्तर हो अथवा एक सुजीवित जीवन के अन्तिम क्षण, उसे उसी प्रकार निकट आना श्रेष्ठ है जैसे यहाँ परीक्षित तथा श्रीशुकदेव उसे निकट आते हैं: कठोरता से पकड़कर नहीं, अपितु हृदय को पहले अपनी सच्ची शरण की ओर मुड़ने देकर।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, अपने समक्ष जो भी कार्य अथवा प्रश्न हो उसे उठाने से पहले, कुछ शान्त क्षणों के लिए रुकें और सरलता से भगवान् को अपना ध्यान अर्पित करें, ठीक उसी प्रकार जैसे श्रीशुकदेव बोलने से पहले करते हैं। “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय” का जप अथवा धीमे स्वर में उच्चारण कुछ बार, बिना जल्दबाज़ी के करें। फिर, कोमलता से देखें कि क्या कोई ऐसी वस्तु है जिसे आप अत्यधिक कठोरता से पकड़े हुए हैं — कोई चिन्ता, कोई योजना, कोई परिणाम जिसे आप नियन्त्रित करने का प्रयास कर रहे हैं। आपको उसे बलपूर्वक त्यागने की आवश्यकता नहीं है। बस उसे देखें, उसी प्रकार जैसे परीक्षित की आसक्तियाँ लगभग स्वयं ही विलीन होती हुई वर्णित की गई हैं, जब उनका मन सचमुच श्रीकृष्ण की ओर मुड़ गया था। यह देखना, चाहे कितना भी छोटा हो, आज का आपका अर्पण हो।

उपसंहार

द्वितीय स्कन्ध का चतुर्थ अध्याय संक्रमण का अध्याय है। यह प्रथम तीन अध्यायों में भरी हुई मृत्यु तथा मुक्ति सम्बन्धी आत्मीय, वैयक्तिक शिक्षा, तथा पञ्चम अध्याय से गम्भीरतापूर्वक आरम्भ होने वाली विशाल ब्रह्माण्ड-विज्ञान सम्बन्धी शिक्षा के मध्य खड़ा है। यह एक राजा के हृदय को भगवान् की ओर अपना मुड़ाव पूर्ण करते हुए दिखाता है, उस सटीक प्रश्न को अभिलिखित करता है जो इस स्कन्ध के शेष अधिकांश

भाग को अधिकृत करेगा, और श्रीशुकदेव को — किसी भी वस्तु की व्याख्या करने से पहले — यह प्रदर्शित करने देता है कि ब्रह्माण्ड के रहस्य को मात्र जिज्ञासा से नहीं, अपितु श्रद्धा से निकट आना कैसा दिखता है। ब्रह्माण्ड वास्तव में कैसे अस्तित्व में आया, इसके विषय में अभी तक कुछ भी नहीं बताया गया है; इसके स्थान पर जो दिया गया है वह है उसे सुनने की सही मुद्रा। अध्याय श्रीशुकदेव के अभी भी बोलते हुए, अभी भी नमन करते हुए समाप्त होता है, सृष्टि की प्रतिश्रुत व्याख्या उसके अन्तिम श्लोक के ठीक पार प्रतीक्षा करती हुई।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), द्वितीय स्कन्ध, चतुर्थ अध्याय, पृष्ठ 98–101।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र जी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी भी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका की प्रतिकृति नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ कोई सम्बद्धता अथवा समर्थन निहित नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-2-adhyay-4-rama-srishti-prashna-suka-upadesh.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट